बाबू कुँवर सिंह

Babu Kunwar Singh

स्वतन्त्रता का सैनिक था, आजादी का दीवाना था,

सब कहते है कुँवर सिंह भी बड़ा मर्दाना था।

(मनोरंजन प्रसाद सिंह)

सन् 1857 ई0 का प्रमुख योद्धा, वीर बांकुड़ा बाबू कुँवार सिंह पर बिहार को ही नहीं, सम्पूर्ण भारत को गर्व है। इनका जन्म सन् 1782 ई0 में बिहार प्रान्त के अन्तर्गत शाहाबाद (अब बदल गया है) जिले के जगदीशपुर नामक गांव में हुआ था। इनके पिता बाबू साहेबजादा सिंह एक जमींदार थे। बाबू कुँवर सिंह का मन बचपन से ही पढ़ने-लिखने में नहीं लगता था। वीरता और साहस उनके जन्मजात गुण थे। पहलवानी करना, तलवार चलाना और घुड़सवारी करना इनका प्रिय शौक था। इनके सत्तासीन होते ही इनकी जमींदारी में सर्वत्र शान्ति एवं समृद्धि छा गया। विकास के नये-नये कार्य किये गये। प्रजा भी इन्हें खूब चाहती थी। बाबू कुँवर सिंह की गिनती शीघ्र ही एक न्यायप्रिय एवं प्रजापालक शासक के रूप में होने लगी। लगता था कि जगदीशपुर में रामराज्य की स्थापना हो गयी हो।

समय बीतता गया और सन् 1857 ई0 में भारत की स्वतन्त्रता का संकेत लेकर आ पहुंची। देश का कोना-कोना आजादी के रंग में डूब गया। सर्वत्र फिरंगियों के विरूद्ध खूनी क्रान्ति की ज्वाला धधक उठी। बस फिर क्या था। अस्सी साल के बूढ़े कुँवर सिंह की रगों में प्रवाहित होने वाला खून भी फिरंगियों के विरूद्ध खौल उठा-

"अस्सी वर्षों हड्डी में जागा जोश पुराना था,

सब कहते है कुँवर ंिसंह भी बड़ा वीर मर्दाना था।"

इतनी उम्र के बावजूद कुँवर सिंह ने बिहार के क्रान्तिकारियों का नेतृत्व किया। इनके पास धन की कमी थी, पर जोश एवं उत्साह का अभाव नहीं था। थोड़े-से सैनिकों के साथ ये क्रान्ति-समर में कूद पड़े। जीत और हार इनके साथ आंख मिचैली खेलती थी।

कभी अंग्रेज जीतते, तो कभी बाबू कुँवर सिंह। कुँवर सिंह लड़ते-लड़ते बिहार से बाहर कालवी जा पहुंचे। कालवी में रानी लक्ष्मीबाई, नाना साहब और कुँवर सिंह तीनों मिलकर अंग्रेजों से लोहा लिया। परन्तु जीत अंग्रेजों की ही हुई। कुँवर सिंह ने शीघ्र ही आजमगढ़ जीतकर इस हार का बदला ले लिया। अंग्रेजों ने जब-जब अपना सारा ध्यान आमजगढ़ पर केन्द्रित किया, तो कुँवर सिंह वहां से निकल पड़े। कुँवर सिंह पुनः बलिया लौटकर पहुंच गये। बलिया से वे जगदीशपुर लौटने लगे। इसी क्रम मंे ज्यों ही इनकी नाव गंगा में आगे चली, दुश्मन की गोली से इनका दाहिना हाथ जख्मी हो गया। बाबू कुँवर सिंह ने अदम्य साहस और सहनशीलता का परिचय देते हुए अपने जख्मी हाथ को काटकर मां गंगा को अर्पित कर दिया-

'हुई अपावन बाहु जान, बस काट दिया लेकर तलवार।

ले गंगे यह हाथ आज तुझकों ही देता हूं उपहार।।

घायल हो जाने के बाद भी कुँवर सिंह ने अपनी गति कायम रखी और सैन्य बल के साथ जगदीशपुर पहुंच गये। पर यहां भी अंग्रेज कैप्टन ले ग्रैण्ड एक विशाल सेना लेकर आ धमका। घमासान युद्ध हुआ। दाहिना हाथ से रहित होने के बावजूद कुँवर सिंह ने अंग्रेजी सेना को शिकस्त दी। अन्ततः सन् 1885 को नर-केसरी बाबू कुँवर सिंह का पार्थिव शरीर हमेशा के लिए माटी मे विलीन हो गया।

बाबू कुँवर सिंह का पार्थिव शरीर तो माटी में विलीन हो गया, लेकिन इन्होंने स्वतन्त्रता की जो मशाल जलायी थी, उसने परतन्त्रता को विलीन करके ही दम लिया। इनके सम्बन्ध मे ब्रिटिश इतिहासकार सर होम्स ने लिखा है-''फिरंगी बहुत सौभाग्यशाली थे कि क्रान्ति के समय कुँवर सिंह की उम्र 40 वर्ष नहीं था। वह बूढ़ा राजपूत ब्रिटिश सत्ता के खिलाफ आन से लड़ा और शान से मरा।'